RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-02
February -2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com [UGC Listed Journal]

# गुप्तोत्तर कालीन आर्थिक स्थिति

डॉ0 मनोज कुमार देव

नियर के बी झा कॉलेज कटिहार

शब्दार्थ–

रंगरेज– कपड़े की रंग रोगन करने वाला, वंगा – वर्तमान बंगाल,

बंजर – अनउपजाऊ भूमि, श्री– एक प्रकार की उपाधि, विलुप्त–समाप्त

इतिहास गवाह है कि गुप्त काल के बाद भारतीय समाज में नाना प्रकार के महत्वपूर्ण बदलाव हुए। सबसे ज्यादा गौर करने की बात है कि पांचवी सदी के बाद से ही भारत में भूमि अनुदान ने सदियों से चली आ रही सामंती विकास में भरपूर मदद की। इतना ही नहीं किसान सामंती अधिपतियों के लिए प्रदान की गई जमीन में रुके और निवास कर रहे थे। इसमें जिन–जिन गाँवों को स्थानांतरित कर दिया गया था उसे स्थान–जन–संहिता, संमृधा के नाम से जाना जाता था और हाँ यह भी गौर करने लायक बात है कि गुप्तोत्तर काल में व्यापार और वाणिज्य में भारी गिरावट के चलते वहाँ की एक बंद अर्थव्यवस्था में परिणत हो गयी थी।

इसके अलावे सामंती समाज के विकास में राजा महाराजा की स्थिति काफी कमजोर कर दी थी। जिसके चलते राजा को सामंती प्रमुखों पर अधिक से अधिक निर्भर रहना मजबूरी बन गया था। साथ ही सामंती प्रमुखों का बहुत ज्यादा वर्चस्व बढ़ने लगा था जिसके परिणामस्वरुप गाँव स्वषासन कमजोर पड़ गया था। इस संबध में विद्वान चीनी यात्री ह्वेनसांग के लेखन मे वर्णित चार वर्ण समाज में मौजूद था जो उस समय और प्रबल हो गयी थी।

हर्षवर्धन के अवधि के दौरान साहित्यिक और षिलालेखीय प्रमाणों से पता चलता है कि राज्य कृषि व्यापार अर्थव्यवस्था में किस प्रकार उन्नत था। तभी तो शुरुआती अरब लेखकों ने भी मिट्टी की उर्वरता और अमीर खेती का वर्णन किया गया है। साहित्यकार अभिधन रत्नमल ने भी उल्लेखित किया है कि मिट्टी की विभिन्न प्रकारों मे जैसे उपजाऊ, बंजर, रेगिस्तान, उतकृष्ट आदि के रुप में वर्गीकृत किए थे।

गुप्तोत्तर काल के आर्थिक स्थिति के संदर्भ में यह भी कहा जाता है कि उद्योग के क्षेत्र में कपड़ा सबसे पुराने उद्योगों में से एक था। उस समय के साहित्य में बुनकर, रंगरेज, दर्जी आदि के पेशे का भी वर्णन किया गया है। इतना ही नहीं गुप्तोत्तर अवधि के दौरान धातु का काम भी बेहद लोकप्रिय था। धातु के कुछ केन्द्र मशहूर थे। उदाहरण के तौर पर सौराष्ट्र अपने घंटी (बेल) के धातु के लिए मशहूर था। तो वहीं टीन उद्योग के लिए बंगों यानी बंगाल मषहूर था। फाह्यान के वर्णन से पता चलता है कि भारत का व्यापार उन्नत अवस्था मे था। फाह्यान ने अपने साथ सफेद रेषम लेकर भारत आने वाले एक चीनी व्यापारी का उल्लेख किया है। जिससे पता चलता है कि भारत व चीन के मध्य व्यापारिक संबंध थे तथा चीन से रेषम आदि आयात की जाती थी। फाह्यान ने लिखा है कि बड़ी वस्तुओं के क्रय–विक्रय में मुद्राओं व छोटी वस्तुओं के क्रय–विक्रय में कौड़ियों का प्रयोग किया जाता था।

फाह्यान के अनुसार भारत में विभिन्ना धर्म विद्यमान थे। फाह्यान भारत में तीर्थाटन एवं बौद्ध धर्म के ग्रंथों का अध्ययन करने के उद्देष्य से आया था। अतः उसने बौद्ध धर्म कहाँ सबल और कहाँ निर्बल था, का विस्तृत वर्णन किया है। फाह्यान के अनुसार पंजाब और बंगाल में बौद्ध धर्म उन्नत अवस्था में था। किन्तु मध्य देष में उसका पतन हो रहा था। मध्य देष में ब्रह्मण धर्म उन्नत अवस्था में था तथा राजा स्वयं ही वैष्णव धर्म का अनुयायी था। ब्रह्मण व बौद्ध धर्मावलम्बियों में पारस्परिक वैमनस्य न था और किसी प्रकार की धार्मिक असहिष्णुता दिखाई नहीं देती थी। परलोक में सब विष्वास करते थे।

फाह्यान के वर्णन से स्पष्ट होता है कि चन्द्रगुप्त द्वितीय के शासन काल में शान्ति विद्यमान थी। तथा जनता सुखी व सम्पन्न थी। उस समय शासन व्यवस्था उच्च कोटी की थी तथा लोग धार्मिक मनोवृति वाले एवं राज्यधर्म सहिष्णु थे। चन्द्रगुप्त द्वितीय के पश्चात उसका पुत्र कुमार गुप्त सिहांसन रुढ़ हुआ। कुमारगुप्त की माता का नाम ध्रुवदेवी था। चप्द्रगुप्त द्वितीय की सांची अभिलेख से प्राप्त अंतिम तिथि 412 ई0 है और कुमार गुप्त की प्रथम ज्ञात तिथि 415 ई0 है जो कि बिलसद अभिलेख से ज्ञात होती है। इस आधार पर अधिकांष मुद्राओं से ज्ञात अंतिम तिथि 455 ई0 है। अतः स्पष्ट है कि कुमार गुप्त ने 413 ई0 से 455 तक शासन किया था।

कुछ विद्वानों का विचार है कि चन्द्रगुप्त के पश्चात कुमारगुप्त नहीं वरन् गोविन्द गुप्त शासक बना था जो चन्द्रगुप्त का ज्येष्ठ पुत्र था। इस मत का प्रतिपादन डॉ0 परमेष्वरी लाल गुप्त प्रमुख है, इसका समर्थन करते है। अपने

RRIJM 2015, All Rights Reserved

मत के समर्थन में ये विद्वान वैषाली की उस राजमुद्रा का उल्लेख करते है, जिसमें गोविन्दगुप्त को चन्द्रगुप्त व ध्रुवगुप्त का पुत्र बताया गया है तथा उसे महाराज कहा गया है। इसके अतिरिक्त मन्दसौर अभिलेख का भी प्रमाण के तौर पर उक्त विद्वान इस तर्क से सहमत नहीं है तथा प्रमुख वंषावलियों के आधार पर जहां चप्द्रगुप्त द्वितीय के पश्चात कुमारगुप्त प्रथम का नाम दिया गया है, मानते है कि गोविन्दगुप्त सम्भवतः वैषाली का स्थानीय शासक था तथा गुप्त सिंहासन का उत्तराधिकारी कुमारगुप्त ही था।

कुमारगुप्त के विषय में उसके अभिलेखों व मुद्राओं से जानकारी प्राप्त होती है। कुमारगुप्त के तेरह अभिलेख प्राप्त हुए है जिसमें से प्रमुख विसलद, गढ़वा मन्दसौर, मनकुमार, करमदण्डा, सांची तथा उदयगिरी है। इनके अतिरिक्त दामोदरपुर, धनैदह व बैगाम के तागपत्रों से भी कुमारगुप्त के बारे में विस्तृत जानकारी मिलती है। कुमारगुप्त की मुद्राओं से भी महत्वपूर्ण जानकारी मिलती है। स्कन्दगुप्त के भीतरी अभिलेख से भी कुमार के खासनकाल पर प्रकाष पड़ता है।

कमारगुप्त ने उपाधियां धारण की जिनके विषय में उसके अभिलेखों व मुद्राओं से पता चलता है। उसने महेन्द्र कुमार, महेन्द्र, श्री महेन्द्र सिंह, महेन्द्र–कर्म, अजित–महेन्द्र, गुप्तकाल–व्योम, आदि उपाधियां धारण की थी। उसकी सबसे प्रमुख उपाधि महेन्द्रादिव्य थी।

कुमारगुप्त के अभिलेखो से ज्ञात होता है कि उसके शासन के प्रारंभिक वर्श शान्तिपूर्वक व्यतीत हुए। कुमारगुप्त को पैतृक रुप अपने पिता का विस्तृत साम्राज्य प्राप्त हुआा था, अतः साम्राज्य विस्तार की ओर ध्यान न देकर उसके अपने शासन काल के प्रारम्भ में साम्राज्य के साधनो का प्रयोग सार्वजनिक एवं धार्मिक कृत्यों में किया। विल्सद अभिलेख से ज्ञात होता है कि कुमार गुप्त के साम्राज्य के चतुर्दिक सुख और शांति का वातावरण विद्यमान था। स्कन्दगुप्त के भीतरी अभिलेख से ज्ञात होता है कि कुमारगुप्त के शासनकाल का अन्तिम चरण शान्तिपूर्ण न था। इस काल में पुष्यमित्रों ने गुप्त साम्राज्यों पर आक्रमण किया। इस अभिलेख के अनुसार इस आक्रमण के परिणामस्वरुप इस काल की राजलक्ष्मी विचलित हो उठी। इसे स्थिर करने के लिए स्कन्दगुप्त को कठोर प्रयास करना पड़ा। पुष्यमित्रों की बाढ़ को रोकने में उसे पूरी रात्री युद्ध–भूमि में ही व्यतीत करनी पड़ी। भीतरी लेख से यह होता है कि पुष्यमित्रों की सैन्य शक्ति और साधन विकसीत थे तथा उसने टक्कर लेना एक टुष्कर कार्य था। इसी कारण इस लेख में तीन बार गुप्तो की लक्ष्मी विचलित होने का उल्लेख मिलता है। जिससे इस आक्रमण की व्रीवता का अनुमान लगाया जा सकता है। कुमारगुप्त इस समय वृद्ध हो चुका था। अतः इस युद्ध का संचालन उसके पुत्र स्कन्दगुप्त ने किया था तथा पुष्यमित्र जैसे शक्तिषाली एवं भयंकर आक्रमणकारियों को परास्त्र कर उसने अपनी योग्यता एवं शक्ति को प्रदर्षित किया। स्कन्दगुप्त की यह विजय अत्यंत महत्वपूर्ण थी क्योंकि इस विजय से पुष्यमित्रों ने उत्पात, भय और आतंक की जो स्थिति उत्पन्न कर दी थी वह समाप्त हो गई और उनके विचलित कर देने वाले प्रहारों से गुप्तवंष विलुप्त होने से बच गया।

कुमारगुप्त के साम्राज्य पर आक्रमण करने वाले ये पुष्यमित्र कौन थे? इस विषय में विद्वानों मे मतभेद है। डॉ0 राखलदास बनर्जी उन्हे हूण तथा हनर्ले उन्हे मैत्रक है। डॉ0 स्मिथ पुष्यमित्रों को पष्चिमोत्तर प्रदेष का निवासी तथा डॉ0 जायसनवाल उन्हें पष्चिमी मालवा का निवासी मानते है। फलीट महोदय के अनुसार वे नर्मदा नदी के तृतीय प्रदेष के निवासी थे। कुछ विद्वान वाकाटक –नरेष नरेन्द्रसेन को पुष्यमित्रो का नेता मानते है। किन्तु कुछ कारणों से कठिन है। ऐसा प्रतीत होता है कि कुमारगुप्त के शासनकाल में किसी विदेषी व्यक्ति ने ही गुप्त साम्राज्य पर आक्रमण किया जिन्हे पुष्यमित्र कहा गया है।

कुछ इतिहासकारों का विचार है कि कुमारगुप्त ने भी समुन्द्रगुप्त के समान दक्षिण भारत का अभियान किया था। अपने मत के समर्थन मक ये विद्वान सतारा जिले से प्राप्त 1395 मुद्राओं व एलिचपुर से प्राप्त 13 मुद्राओं पर व्याध्र–बल–पराक्रम लिखा है जिससे उपरोक्त विद्वान यह अनुमान करते है कि कुमारगुप्त नर्मदा नदी को पार कर व्याध्र सुक्त अरण्य–क्षेत्र पर अधिकार करने करने का प्रयास किया थां किन्तु इन स्त्रातों के आधार पर किसी निष्चित निष्कर्ष पर पहुँचना कठिन है, क्योंकि सम्भव है कि सतारा व इलिचपुर से प्राप्त मुद्राए व्यापारिक–सम्बंधों के कारण वहाँ पहुँची हो। इसके अतिरिक्त कुमारगुप्त ने दक्षिणी–अभियान किया भी था तो उसको विजय प्राप्त हुई अथवा नहीं, इस विषय में कोई प्रमाण नहीं मिलता।

कुमारगुप्त ने अष्वमेध यज्ञ का आयोजन किया था। उसके इस यज्ञ के विषय मे उसके किसी अभिलेख में वर्णन ही मिलता है किन्तु उसकी मुद्राओं से इसकी पूष्टि होती है। उसकी अष्वमेध प्रकार की मुद्राओं के मुख भाग पर सुसज्जित यज्ञ का अष्व व सम्राट का नाम उत्कीर्ण किया गया है जो उसकी धर्म सहिष्णुता को प्रमाणित करता है। उसकी धर्म सहिष्णु नीति के कारण उसके धर्म काल में अन्य धर्मो की भी प्रगति हुई। हेवनसांग के वर्णन से ज्ञात होता है कि बौद्धों के प्रति कुमारगुप्त का व्यवहार सौहार्द्रपूर्ण था। उसके शासनकाल में महात्मा बुद्ध की एक मूर्ति व नालंदा में एक बौद्ध विहार की स्थापना हुई थी। करमदण्डा के लेख में स्थापना हुई थी। करमदण्डा के लेख मे कुमारगुप्त द्वारा षिवजी की प्रतिमा की स्थापना का उल्लेख मिलता है। मन्दौर के लेख से ज्ञात होता है कि कुमारगुप्त के शासनकाल में दषपुर में एक भव्य सूर्य मंदिर का निर्माण किया गया था। इस प्रकार स्पष्ट है कि उसके राज्य में बुद्ध, षिवजी तथा सूर्य की पुजा स्वतंत्र रुप से की जाती थी व कुमारगुप्त का प्रत्येक धर्म के प्रति व्यवहार एक समान था।

RRIJM 2015, All Rights Reserved 

कुमारगुप्त के शासनकाल में अनेक महत्वपूर्ण जन हित के कार्य किए गए। कुमारगुप्त के अभिलेखो में उसके द्वारा किए गए विभिन्न योगदानों का उल्लेख मिलता है। बैग्राम के ताम्रलेख धाना इदह के ताम्रलेख व गढवा के लेख ऐसे अनेक दोनों उल्लेख करते है। अन लेखों में यह भी लिखा हुआ है कि दान में दी गई भूमि के हरण करने वाले व्यक्ति को धोर नरक यातना सहनी पड़ती थी।

कुमारगुप्त को पैतृक सम्पत्ति के रुप में अपने पिता का विस्तृत साम्राज्य मिला था। कुमारगुप्त एक प्रतापी शासक व महान यौद्धा न था, अतः वह पैतृक रुप में प्राप्त साम्राज्य का विस्तार न कर सका किन्तु फिर भी वह अपने विषाल साम्राज्य को अक्षुण्ण रखने में सफल रहा। कुमारगुप्त के शासनकाल के अन्तिम चरण में यद्यपि गुप्त साम्राज्य पर पुष्यमित्रों ने आक्रमण किया किन्तु कुमारगुप्त अपने साम्राज्य को विघटित न होने दिया। करमदण्डा अभिलेख में कुमारगुप्त के राज्य विस्तार वर्णन करते हुए कहा है, ''कुमारगुप्त एक विषाल साम्राज्य पर शासन करता जो उत्तर में सुमेरु व कैलाष पर्वतों से दक्षिण में विनध्य वनों तक तथा पूर्व व पष्चिम में सागरों के बीच में फैला हुआ था। इनके बीच में उसका राज्य मेखला की भांति झूम रहा था।'' मन्दौर अभिलेख के अनुसार कुमारगुप्त सम्पूर्ण पृथ्वी का शासक था जो चारों ओर समुद्र से घिरी हुई थी। कुमारगुप्त का साम्राज्य उत्तर में हिमालय से दक्षिण में नर्मदा नदी तक पूर्व में बंगाल से पष्चिम में सौराष्ट तक विस्तृत था।

कुमारगुप्त का शासनकाल का एक वैभवषाली काल था। इस काल में गुप्तों का सम्मान पूर्वत विद्यमान रहा। डाण्डेकर महोदय ने अपनी तुलना ''देवताओं के सेनानायक'' से की है किन्तु वह न तो समुन्द्रगुप्त की तरह महान यौद्धा था और न ही चन्द्रगुप्त द्वितीय की भांति मनुष्यों का एक निर्भिक नेता था। यद्यपि डाण्डेकर महोदय का उपरोक्त कथन ठीक है किन्तु उल्लेखनीय है कि कुमारगुप्त ने अपने साम्राज्य को अक्षुण्ण रखा था तथा उसका शासनकाल सैन्य सफलता में समुन्द्रगुप्त के समान न होने पर भी कुछ दृष्टिकोणों से अत्यंत महत्वपूर्ण था। कुमारगुप्त का राज्यकाल शान्ति, प्रस्शती व समृद्धि का काल था। कुमारगुप्त क लेखों व मुद्राओं से तत्कालीन आर्थिक व सांस्कृतिक विकास पर प्रकाष पड़ता है। इन्हीं स्त्रोतों से ज्ञात होता है कि कुमारगुप्त ने गुप्तकालीन करते हुए उसे बुद्धिमान, शक्तिसम्पन्न, यषस्वी, पृथ्वी का स्वामी तथा लक्ष्मी वान कहा गया है। मन्दौर लेख में भी कुमारगुप्त की प्रषंसा करते हुए लिखा है कि कुमारगुप्त ऐसी पृथ्वी पर शासन कर रहा था, जिसके चारों ओर समुन्द्र करमबद्ध थे। सुमेरु एवं कैलाष पर्वत वृहत प्याधर के तुल्य थे तथा सुरम्य वाटिाओं में खिले हुए प्रसन्न ही जिसकी हंसी के समान थे मंजश्रीमूलकल्प में भी कुमारगुप्त को गुप्त वंष का सबसे श्रेष्ठ शासक कहा गया है। डॉ0 मजूमदार ने कुमारगुप्त की प्रशंसा करते हुए लिखा है कि कुमारगुप्त के शासनकाल को प्रायः रुचिहीन व महत्वहीन माना जाता है जो कि उचित नहीं है। उसने एक विषाल साम्राज्य पर शासन किया था तथा इतने विषाल साम्राज्य को शक्तिषाली एवं उपकारी शासक ही नियंत्रण में रख सकता था। उसके अतिरिक्त कुमारगुप्त के लिए यह श्रेय की बात थी कि लगभग 40 वर्ष तक शान्तिपूर्ण समय में उसने अपने शासन काल में सेना की शक्ति को क्षीण नहीं होने दिया।

**निष्कर्षः**–उपरोक्त विष्लेषणों से जगजाहिर होती है कि गुप्तोत्तर कालीन अर्थिक स्थिति बहुत नाजुक नही तो ज्यादी खुषहाली से भरी पड़ी भी नहीं थी ।

पर हाँ यह भी गौर करने की बात हे कि गुप्तकाल के बाद दक्षिण पूर्व एष्यिा के साथ–साथ व्यापार में आशातीत वृद्धि हुई थी। इतना ही नहीं भारत के बीच व्यापार का प्रवाह का उल्लेख अरब, चीनी, भारतीय स्त्रोतों में किया है। साथ ही भारत चंदन की लकड़ी, मोती, कपास, कपूर, धातु कीमती और अर्द्ध किमती पत्थरों का निर्यात करता था। साथ आयातीत वस्तुओं में किराये के घोड़े शामिल थे। घोड़ों का मध्य एवं पष्चिमी एष्यिा से आयात किया जाता था। तभी तो गुप्तकाल में सराई और निकाय महत्वपूर्ण मानी गई थी। कुल मिलाकर गुप्तोत्तर कालीन आर्थिक स्थिति संतोष जनक मानी जाती है।

## संदर्भ सूची :–

1) भारतीय सामंतवाद, लेखक – रामषरण शर्मा, वर्ष (2002)
2) इतिहास, लेखक – डॉ0 ए0 के0 चतुर्वेदी, प्राचार्य, परिष्कार कॉलेज ऑफ ग्लोबलएक्सीलेस जयपूर (राजस्थान विष्वविद्यालय, जयपूर)